

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 65 — बलराम का वृन्दावन आगमन

5 October 2026



बचपन के साथियों की याद में बलराम व्रज लौटते हैं, रोती हुई गोपियों को कृष्ण के अपने सन्देशों से सान्त्वना देते हैं, और अपने हल की नोक से गर्वीली यमुना को अपने चरणों तक खींच लाते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध के इस पैंसठवें अध्याय में शुकदेवजी भगवान बलराम के साथ नन्द के व्रज में लौटते हैं, जहाँ हर हृदय कृष्ण का समाचार सुनने को तरस रहा है, और जहाँ एक पावन नदी हल की नोक पर यह सीखती है कि उसके स्वामी वास्तव में कौन हैं।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, उत्तरार्ध)
- अध्याय: 65 (पञ्चषष्ठितम अध्याय)

- अध्याय शीर्षक: भगवान बलराम का वृन्दावन आगमन
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए)
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: ब्रज में नन्द का गोकुल और वृन्दावन के समीप यमुना-तट के उपवन
- केंद्रीय विषय: बलराम का ब्रज-आगमन; कृष्ण के विषय में गोपों और गोपियों के प्रश्न; गोपियों को उनकी सान्त्वना; यमुना का मान-मर्दन और उसकी शरणागति की प्रार्थना
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 65, श्लोक 1-34
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, दशम स्कन्ध)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

चौंसठवें अध्याय में कृष्ण ने राजा नृग को गिरगिट की देह से मुक्त किया और सुना कि दान में दी गई एक गाय अनजाने में उसके हाथ लौट आई थी। फिर कृष्ण ने अपने कुटुम्बियों को समझाया कि ब्राह्मण के धन का अपहरण कितना भयंकर पाप है। द्वारका की उस शिक्षा से शुकदेवजी अब ब्रज की ओर मुड़ते हैं।

बलराम का ब्रज लौटना

शुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि भगवान बलभद्र के हृदय में अपने पालने वाले गोपों को, साथ खेले हुए सखाओं को और बचपन के वनों व नदी को फिर से देखने की उत्कण्ठा जाग उठी। अतः वे द्वारका में रथ पर आरूढ़ होकर नन्दजी के गोकुल की ओर चल पड़े।

ब्रजवासी बहुत समय से उनकी बाट जोह रहे थे। रथ दिखते ही गोप और गोपियाँ दौड़कर उनसे लिपट गए। बलराम ने नन्द और यशोदा को प्रणाम किया, और उन दोनों ने हृदय की गहराई से आशीर्वाद दिया: तुम जगत् के स्वामी हो, अपने छोटे भाई सहित चिरकाल तक हमारी रक्षा करो। फिर, मानो वे अब भी नन्हे बालक हों, उन्होंने उन्हें गोद में बिठा लिया और तब तक रोते रहे जब तक वे आँसुओं से भीग न गए।

चिरं नः पाहि दाशार्ह सानुजो जगदीश्वरः ।

इत्यारोप्याङ्गमालिङ्ग्य नेत्रैः सिषिचतुर्जलैः ॥ ३ ॥

ciraṁ naḥ pāhi dāśārha sānujo jagad-īśvaraḥ ity āropyaṅkam āliṅgya netraiḥ siṣicatur jalaiḥ

अर्थ: “हे दाशार्ह, तुम जगदीश्वर हो; अपने अनुज सहित दीर्घकाल तक हमारा पालन करो।” ऐसा कहकर उन दोनों ने उन्हें अंक में बिठाया, आलिंगन किया और नेत्रों के जल से उन्हें नहला दिया। (स्कन्ध 10, अध्याय 65, श्लोक 3)



बलराम का रथ नन्द के गोकुल पहुँचता है; गोप-गोपियाँ दौड़कर उनसे मिलते हैं, और नन्द-यशोदा उन्हें गोद में बिठाकर आनन्द के आँसुओं से नहला देते हैं।

गोपों के बीच

बलराम ने वृद्ध गोपों को यथोचित सम्मान दिया और छोटे गोपों ने उन्हें प्रणाम किया। ब्रज के हर पुरुष से वे उसी भाव से मिले जो उनका सम्बन्ध माँगता था — किसी से हँसी-ठिठोली, किसी का हाथ थामना, आयु, मित्रता और नाते के अनुसार। विश्राम के बाद गोप उन्हें घेरकर बैठ गए। शुकदेवजी इन सरल पुरुषों का परिचय एक स्मरणीय पद में देते हैं: कमलनयन कृष्ण के लिए उन्होंने सांसारिक लाभ, स्वर्ग और मोक्ष तक का त्याग कर दिया था। बलराम ने उनका कुशल पूछा और प्रेम से गद्गद वाणी में उन्होंने भी उनका।

क्या द्वारका में सब कुटुम्बी कुशल हैं? अब जब आप और कृष्ण विवाहित हैं और सन्तानवान हैं, क्या आप ब्रज को याद करते हैं? सौभाग्य से पापी कंस मारा गया और कुटुम्बी छूट गए; सौभाग्य से दोनों भाइयों ने शत्रुओं को मारकर या जीतकर एक दुर्ग-नगर में सुरक्षित वास पाया। उनके शब्दों में कोई उलाहना न था — केवल प्रभु की विजयों का आनन्द और स्मरण किए जाने की मौन आशा।

गोपियाँ कृष्ण के विषय में पूछती हैं

गोपियाँ भी बलराम को इतने निकट पाकर अपने को सम्मानित अनुभव करती हुई मुस्कराती हुई उनके पास आईं। किन्तु उनके प्रश्न सीधे उस एक नाम पर जा टिके जिसे वे बोलना बन्द नहीं कर सकती थीं। क्या कृष्ण, जो अब नगर की स्त्रियों के प्रिय हैं, सुखी हैं? क्या वे कभी अपने सम्बन्धियों और मित्रों को, पिता को, माता को याद करते हैं? क्या वे एक बार भी यशोदा को देखने आएँगे? और क्या वे महाबाहु हमारी निरन्तर सेवा को थोड़ा-सा भी स्मरण करते हैं?

कच्चित् स्मरति वा बन्धून् पितरं मातरं च सः ।

अप्यसौ मातरं द्रष्टुं सकृदप्यागमिष्यति ।

अपि वा स्मरतेऽस्माकमनुसेवां महाभुजः ॥ १० ॥

kaccit smarati vā bandhūn pitaraṁ mātaraṁ ca saḥ apy asau mātaraṁ draṣṭuṁ sakṛd apy āgamiṣyati api vā smarate 'smākam anusevāṁ mahā-bhujah

अर्थ: क्या वे अपने बन्धुओं को, पिता और माता को कभी याद करते हैं? क्या वे माता को देखने के लिए एक बार भी लौटेंगे? और क्या वे महाभुज हमारी उस अविरल सेवा-भक्ति को स्मरण करते हैं? (स्कन्ध 10, अध्याय 65, श्लोक 10)

फिर प्रश्नों के नीचे छिपा शोक फूट पड़ा। उन्होंने कहा, कृष्ण के लिए हमने माता-पिता, भाई, पति, पुत्र और बहनें — ऐसे नाते जिन्हें छोड़ना कठिनतम है — सब त्याग दिए। किन्तु वे एक ही क्षण में हमें छोड़कर चले गए और स्नेह का हर बन्धन काट गए। उनके मधुर वचनों पर स्त्रियाँ भला विश्वास कैसे न करतीं?

एक गोपी ने कटुता से कहा कि मथुरा की चतुर स्त्रियाँ ऐसे चंचल और कृतघ्न हृदय पर कभी विश्वास न करेंगी। दूसरी बोली कि कृष्ण तो मनोहर बातें बनाने में निपुण हैं; उनकी मुस्कान और चितवन ने उन स्त्रियों में ऐसी चाह जगा दी होगी कि वे भी उन पर वैसे ही विश्वास कर बैठें जैसे कभी हमने किया था। तीसरी ने कहा: उनकी चर्चा ही क्यों? यदि वे हमारे बिना दिन काट सकते हैं तो हम भी उनके बिना काट लेंगी। किन्तु यह कहते-कहते उन्हें उनकी हँसी, उनकी बातें, उनकी प्यारी चितवन, उनकी चाल और उनका प्रेमालिंगन याद आ गया, और व्रज की स्त्रियाँ रो पड़ीं।



बलराम की उपस्थिति से सम्मानित गोपियाँ पूछती हैं कि क्या कृष्ण सुखी हैं, क्या वे अपनी माता को याद करते हैं, क्या उन्हें गोपियों की भक्ति स्मरण है — और उनकी तड़प आँसुओं में बदल जाती है।

बलराम गोपियों को सान्त्वना देते हैं

भगवान् संकर्षण ने उनके शोक से तर्क नहीं किया; वे कुछ बेहतर लाए थे। वे स्वयं कृष्ण के सन्देश लेकर आए थे, और वे कोमल अनुनय की हर कला जानते थे। उन्हीं शब्दों से उन्होंने गोपियों को धीरज बाँधाया।

सङ्कर्षणस्ताः कृष्णस्य सन्देशैर्हृदयङ्गमैः ।

सान्त्वयामास भगवान् नानानुनयकोविदः ॥ १६ ॥

saṅkarṣaṇas tāḥ kṛṣṇasya sandeśair hṛdayaṅgamaiḥ sāntvayām āsa bhagavān nānānunaya-kovidāḥ

अर्थ: अनेक प्रकार के अनुनय में कुशल भगवान संकर्षण ने कृष्ण के हृदयस्पर्शी सन्देशों से उन गोपियों को शान्त किया। (स्कन्ध 10, अध्याय 65, श्लोक 16)

बलराम चैत्र और वैशाख के दो वसन्त-मासों तक व्रज में रहे, और रात-रात गोपियों को अपने संग का आनन्द देते रहे। यमुना-तट के उपवन पूर्ण चन्द्रमा की चाँदनी में नहाए थे, मन्द वायु रात में खिले कुमुदों की सुगन्ध ले आती थी, और वहाँ व्रज की स्त्रियों से घिरे प्रभु अपनी लीलाओं में रमे रहे।



चैत्र और वैशाख के दो वसन्त-मासों तक बलराम यमुना के पूर्णिमा-चाँदनी से नहाए उपवनों में गोपियों को आनन्दित करते हैं, जहाँ वृक्ष-कोटर से दिव्य वारुणी बहती है।

वारुणी की सुगन्ध

उन्हीं रातों में जल के अधिपति वरुण ने दिव्य पेय वारुणी भेजी; वह एक वृक्ष के कोटर से बहने लगी और पूरे वन को अपनी सुगन्ध से भर दिया। वायु उस मधु-धारा की गन्ध बलराम तक ले आई; वे उसका अनुसरण करते वृक्ष तक गए और साथ की स्त्रियों सहित उसका पान किया। फिर, जब गोपियाँ उनके पराक्रमों का गान कर रही थीं, वे उस अमृत की मधुर मस्ती में नेत्र घुमाते हुए वनों में विचरने लगे।

बलराम यमुना को बुलाते हैं

प्रभु वन-पुष्पों की माला और वैजयन्ती माला से सजे थे, एक कान में एक ही कुण्डल झिलमिला रहा था, उनका कमल-मुख मुस्कान से उज्ज्वल और स्वेद-बिन्दुओं से सुशोभित था। उसी भाव में उन्होंने यमुना को पास बुलाया ताकि वे उसके जल में क्रीड़ा कर सकें। किन्तु नदी की देवी ने उनके वचनों को मतवाले के बोल समझकर उन पर ध्यान न दिया; वह नहीं आई। तब बलराम क्रुद्ध हो उठे। हल की नोक से नदी को पकड़कर वे उसे अपनी ओर खींचने लगे और उसे फटकारा: “पापिनी, तू मेरा तिरस्कार करती है और बुलाने पर भी नहीं आती। तू जहाँ चाहे बहती फिरती है — अब मैं अपने हल की नोक से तुझे सौ धाराओं में चीर दूँगा।”

यमुना की प्रार्थना

इस प्रकार धमकाई गई भयभीत देवी यदुनन्दन प्रभु के चरणों में गिर पड़ी और काँपती हुई बोली।

राम राम महाबाहो न जाने तव विक्रमम् ।

यस्यैकांशेन विधृता जगती जगतः पते ॥ २८ ॥

rāma rāma mahā-bāho na jāne tava vikramam yasyaikāṁśena vidhṛtā jagatī jagataḥ pate

अर्थ: “राम, हे महाबाहु राम! हे जगत् के स्वामी, मैं आपके पराक्रम को न जान सकी — आप, जिनके एक अंश मात्र से यह सारी पृथ्वी धारण की हुई है।” (स्कन्ध 10, अध्याय 65, श्लोक 28)

परं भावं भगवतो भगवन् मामजानतीम् ।

मोक्तुमर्हसि विश्वात्मन् प्रपन्नां भक्तवत्सल ॥ २९ ॥

param bhāvaṁ bhagavato bhagavan mām ajānatīm moktum arhasi viśvātman prapannāṁ bhakta-vatsala

अर्थ: “हे भगवन्, मैं भगवान के परम स्वरूप से अनजान थी। हे विश्वात्मन्, हे भक्तवत्सल, मैं आपकी शरण में हूँ; कृपा करके मुझे छोड़ दीजिए।” (स्कन्ध 10, अध्याय 65, श्लोक 29)

यहीं इस अध्याय का हृदय है। यमुना एक देवी है, वही नदी जिसके जल में कृष्ण ने कालिय के फणों पर नृत्य किया था। फिर भी बलराम का अरुण मुख और डोलते नेत्र देखकर उसने उन्हें रूप से आँका और उनकी आज्ञा को मतवाले की बड़बड़ाहट समझ लिया। उसकी प्रार्थना उसकी भूल को ठीक-ठीक नाम देती है: वह उनके विक्रम को, उनके पराक्रम को नहीं जानती थी, न प्रभु के परं भावम् को, उनके दिव्य स्वरूप को — उस सत्ता को जिसके एक अंश मात्र से, सहस्र फणों वाले शेष से, पृथ्वी थमी हुई है। वह हल किसी मतवाले ग्वाले का क्रोध नहीं था, बल्कि अपने स्वामी को भूल बैठी दासी को सुधारता प्रभु का हाथ था; और जिस क्षण उसने स्मरण किया, उन्हें भक्तवत्सल पुकारा और स्वयं को प्रपन्ना कहकर समर्पित किया, क्रोध समाप्त हो गया। जो प्रभु मनुष्य की भाँति खेलते दिखते हैं, वे कभी प्रभु से कम नहीं होते।

नदी में जल-विहार और कान्ति का उपहार

उसकी विनती पर भगवान बलराम ने यमुना को छोड़ दिया और गोपियों सहित उसके जल में वैसे ही उतरे जैसे गजराज अपनी हथिनियों के साथ नदी में उतरता है। मन भर विहार करके जब वे तट पर आए, तो कान्ति — जो स्वयं लक्ष्मी की द्युति हैं — ने उन्हें दो नीले वस्त्र, बहुमूल्य आभूषण और एक चमचमाता स्वर्ण-हार भेंट किया। नीले वस्त्र और हार पहने, आभूषणों से सजे और चन्दन से लिप्त वे इन्द्र के महान् श्वेत गज ऐरावत के समान शोभित हुए।



जल-विहार के बाद नदी से बाहर आते बलराम को कान्ति नीले वस्त्र, बहुमूल्य आभूषण और स्वर्ण-हार भेंट करती हैं, और वे इन्द्र के गज ऐरावत के समान शोभित होते हैं।

जो चिह्न आज भी शेष है

फिर शुकदेवजी ने राजा को वह चिह्न दिखाया जिसे तीर्थयात्री आज भी देख सकते हैं।

अद्यापि दृश्यते राजन् यमुनाकृष्टवर्त्मना ।
बलस्यानन्तवीर्यस्य वीर्यं सूचयतीव हि ॥ ३३ ॥

adyāpi dṛśyate rājan yamunākṛṣṭa-vartmanā balasyānanta-vīryasya vīryaṁ sūcayatīva hi

अर्थ: हे राजन्, आज भी यमुना उसी मार्ग से बहती दिखाई देती है जिस पर उसे खींचा गया था, मानो वह अनन्त बलशाली बलराम के पराक्रम की घोषणा कर रही हो। (स्कन्ध 10, अध्याय 65, श्लोक 33)

व्रज की स्त्रियों की माधुरी से मोहित बलराम समय की गिनती ही भूल गए, और उनके निवास की सारी रातें ऐसे बीत गईं मानो एक ही रात हो। इसी चित्र पर अध्याय समाप्त होता है — कृष्ण के बड़े भाई, व्रज के हर प्रेमी की भाँति, उसी भूमि के प्रेम में बँधे हुए जिसने उन्हें पाला था।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. प्रभु अपने पालने वालों को नहीं भूलते। बलराम की यात्रा व्रज की उत्कण्ठा से आरम्भ होती है। द्वारका के स्वामी आज भी नन्द-यशोदा की गोद में बैठते हैं; जिस भक्त ने उनसे प्रेम किया, वह उनके हृदय में कभी पीछे नहीं छूटता।
2. कृष्ण के लिए त्याग गया हर कुछ गिना जाता है। गोपों ने कमलनयन कृष्ण के लिए सांसारिक लाभ, स्वर्ग और मोक्ष तक छोड़ दिया था; गोपियों ने अपने निकटतम सम्बन्धी। यह त्याग हानि नहीं, उनके प्रेम का मापदण्ड है।

3. कृष्ण का वचन ही सच्ची सान्त्वना है। बलराम न गोपियों से बहस करते हैं, न कृष्ण की अनुपस्थिति का कारण समझाते हैं; वे कृष्ण के अपने सन्देश सुनाते हैं, और वही उन्हें चंगा करते हैं।

4. प्रभु को रूप से मत आँको। यमुना ने अरुण मुख और डोलते नेत्र देखकर आज्ञा की उपेक्षा कर दी। उसकी स्वीकारोक्ति हमें सिखाती है कि प्रभु की लीला जब सबसे अधिक मानवीय लगे, तब भी उनके परम स्वरूप को थामे रहें।

5. शरणागति प्रभु के क्रोध को तत्क्षण शान्त करती है। ज्यों ही नदी ने उन्हें भक्तवत्सल कहा और स्वयं को शरणागत बताया, उन्होंने उसे छोड़ दिया। उनका दण्ड भूले हुआ को उनके चरणों तक लौटाने भर के लिए है।

एक भक्तिमय चिन्तन

इस अध्याय में जो बात मेरे मन में टिक जाती है, वह यह है कि यहाँ प्रेम कितनी बार प्रश्न का रूप लेता है। “क्या आप हमें याद करते हैं?” गोप पूछते हैं। “क्या वे अपनी माता को याद करते हैं? क्या वे हमारी सेवा को याद करते हैं?” गोपियाँ पूछती हैं। ब्रज में कोई धन या सुरक्षा नहीं माँगता; सब बस यह पूछते हैं कि क्या वे अब भी उनकी स्मृति में हैं। यही भक्त के हृदय की सारी व्याकुलता है, और बलराम का उत्तर कृष्ण के अपने शब्द हैं: प्रभु स्मरण रखते हैं। फिर अध्याय हमें दिखाता है कि भूलना वास्तव में कैसा दिखता है — एक पावन देवी जो एक क्षण के लिए भूल गई कि उसे कौन बुला रहा है। गोपियों को भय था कि वे भुला दी गई, और वे गलत थीं; यमुना भूल गई और उसे हल से लौटाना पड़ा। हमारा भय यह न हो कि उन्होंने हमें भुला दिया, बल्कि यह कि कहीं हम उन्हें न भूल जाएँ — और तब भी उनका हल कृपा ही है, जो हमें उनके चरणों तक खींच लाता है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज कुछ शान्त क्षण निकालकर गोपियों के प्रश्न को उलटकर अपने से पूछें: क्या मैंने आज उन्हें याद किया? प्रभु ने आपके लिए जो एक काम किया हो, उसे स्मरण करें और एक सरल प्रार्थना के साथ उन्हें लौटा दें: “हे भक्तवत्सल प्रभु, मैं आपकी शरण में हूँ।” जब भी अभिमान या विस्मृति आपको उनके चरणों से खींचे, यमुना के ये शब्द आपके अपने बन जाएँ। आरम्भ में धीरे-धीरे जपें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

दशम स्कन्ध का पैंसठवाँ अध्याय भगवान बलराम को ब्रज लौटा लाता है, जहाँ नन्द-यशोदा उन पर आँसू बहाते हैं, गोप और गोपियाँ कृष्ण के लिए अपनी तड़प उँडेल देते हैं, और वे उस तड़प को अपने भाई के सन्देशों से भर देते हैं। फिर यमुना-तट पर चाँदनी के दो मास बीतते हैं, जब तक स्वयं नदी, दिव्य लीला को साधारण मद समझकर, उनके चरणों तक खींच नहीं ली जाती। उसकी स्वीकारोक्ति में अध्याय का केन्द्रीय सत्य है: प्रभु भले मनुष्य-सा आचरण करते दिखें, वे पृथ्वी को धारण करने वाले परम पुरुष ही रहते हैं, और जो उनकी शरण लेता है वह क्षण भर में मुक्त हो जाता है। हम भी ब्रज की भाँति उनकी स्मृति सँजोए रखें, और हमें लौटाने के लिए कभी हल की आवश्यकता न पड़े।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी), दशम स्कन्ध (उत्तरार्ध), पञ्चषष्टितम अध्याय।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-65-lord-balarama-visits-vrindavana-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

